

तुम पर के कर्ता नहीं नाथ, ज्ञाता हो सब के एक साथ।
तुम भक्तों को कुछ नहीं देत, अपने समान बस बना लेत॥
यह मैंने तेरी सुनी आन, जो लेवे तुम को बस पिछान।
वह पाता है कैवल्यज्ञान, होता परिपूर्ण कला-निधान॥
विपदामय परपद है निकाम, निजपद ही है आनन्द-धाम।
मेरे मन में बस यही चाह, निजपद को पाऊँ हे जिनाह॥
ॐ ह्रीं श्रीसिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपदप्राप्तये महार्घ्यं नि. स्वाहा।
(दोहा)

पर का कुछ नहीं चाहता, चाहूँ अपना भाव।
निज-स्वभाव में थिर रहूँ, मेटो सकल विभाव॥
(पुष्पाञ्जलिं क्षिपेत्)

अशरीरी सिद्ध भगवान

(तर्ज) - (करुणा सागर भगवान, भव पार लगा देना)

अशरीरी-सिद्ध भगवान, आदर्श तुम्हीं मेरे।
अविरुद्ध शुद्ध चिद्घन, उत्कर्ष तुम्हीं मेरे॥टेक॥
सम्यक्त्व सुदर्शन ज्ञान, अगुरुलघु अवगाहन।
सूक्ष्मत्व वीर्य गुणखान, निर्बाधित सुखवेदन॥
हे गुण अनन्त के धाम, वन्दन अगणित मेरे॥१॥
रागादि रहित निर्मल, जन्मादि रहित अविकल।
कुल गोत्र रहित निष्कुल, मायादि रहित निश्छल॥
रहते निज में निश्चल, निष्कर्म साध्य मेरे॥२॥
रागादि रहित उपयोग, ज्ञायक प्रतिभासी हो।
स्वाश्रित शाश्वत-सुख भोग, शुद्धात्म-विलासी हो॥
हे स्वयं सिद्ध भगवान, तुम साध्य बनो मेरे॥३॥
भविजन तुम-सम निज-रूप, ध्याकर तुम-सम होते।
चैतन्य पिण्ड शिव-भूप, होकर सब दुख खोते॥
चैतन्यराज सुखखान, दुख दूर करो मेरे॥४॥